सत्ता का वर्चस्ववादी स्वरूप और हिन्दी की महिला आत्मकथाएँ

दयालबाग़ एजुकेशनल इन्स्टीट्यूट (डीम्ड यूनिवर्सिटी) दयालबाग़
आगरा के अन्तर्गत पीएच.डी. (हिन्दी)
उपाधि हेतु शोध प्रबन्ध की
रूपरेखा
सन् 2019

शोध निर्देशक | **शोधार्थी**

डॉ. सूरज प्रकाश (बड़त्या)
असिस्टेंट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग, कला संकाय
डी.ई.आई.

मेघना यादव

विभागाध्यक्ष
प्रो. शर्मिला सक्सेना
हिन्दी विभाग, कला संकाय,
डी.ई.आई.

कला संकाय प्रमुख
प्रो. जे. के. वर्मा

हिन्दी विभाग, कला संकाय,
दयालबाग़ एजुकेशनल इन्स्टीट्यूट (डीम्ड यूनिवर्सिटी)
दयालबाग़, आगरा – 282005

सत्ता का वर्चस्ववादी स्वरूप और हिन्दी की महिला आत्मकथाएँ

प्रत्येक समय तथा समाज में सामान्य समझी जाने वाली अवधारणाओं का सम्बन्ध उस समय तथा समाज से गहरे रूप में जुड़ा होता है। इसमें सत्ता द्वारा पोषित अवधारणा भी होती है और सामान्य जीवन में मौजूद लोक अवधारणा भी। हमारे समाज ने मनुष्य सभ्यता के विकास क्रम में सत्ता व व्यवस्था को अनेक स्वरूपों में देखा तथा उन वर्चस्ववादी ताकतों के अनुरूप जीवन जीने को बाध्य हुआ। सत्ता के अनेक प्रकार यथा धर्म की सत्ता, जाति की सत्ता, पूँजीवादी सत्ता, पितृसत्ता, पारिवारिक सत्ता, राजनीतिक सत्ता, सामाजिक सत्ता, सांस्कृतिक सत्ता, वर्चस्ववादी सत्ता हमारे समाज में विद्यमान हैं। इन सभी सत्ताओं का मनुष्य समाज और समुदाय से बहुत ही गहरा सम्बन्ध है। ये सभी सत्ताएँ मनुष्य जीवन को प्रभावित करती हैं। इसलिए इन सभी का प्रयोग राजनीतिक सत्ता अपने लिए करती है जिससे उसका प्रभुत्व या वर्चस्व बना रहे।

प्रसिद्ध यूरोपियन चिन्तक कार्ल मार्क्स ने समाज के विकास की ऐतिहासिक व्याख्या करते हुए मानव–इतिहास को छह चरणों में बाँटा है– आदिम साम्यवादी युग, दास युग, सामन्तवादी युग, पूँजीवादी युग, समाजवादी युग और साम्यवादी युग। यह एक प्रकार से समाज का वर्गीय सत्तामूलक विश्लेषण था। आदिम सम्यवादी युग में मनुष्य न खेती करता था न ही किसी प्रकार का उत्पादन। इसलिए किसी भी प्रकार के व्यक्तिगत अधिकार की अवधारणा उस युग में नही थी। यहाँ कोई सत्ता नहीं थी, न ही वर्ग बने थे और न ही किसी प्रकार का शोषण व्याप्त था। वह समाज एक प्रकार से शोषणमुक्त सामूहिक सत्तामूलक समाज था। मनुष्य सभ्यता के प्रारम्भिक चरण में लोकतांत्रिक कबीलाई समाज था। आदिम मानव समाज से लेकर कबीलाई समाज या गण समूहों में मातृसत्तात्मक समाज था। इनमें एक कबीले की दूसरे कबीले से लड़ाई होती रहती थी परन्तु जब एक कबीले ने दूसरे कबीले पर अधिकार कर लिया किया तब उस कबीले के लोगों को अपना दास बना लिया। इन युद्धों में कबीलों ने पशु तथा दासियों को भी नियंत्रित करना शुरू कर दिया, इस तरह लिंग आधारित विभाजन प्रारम्भ हुआ। दास युग में कृषि पशुपालन आदि का विकास होने लगा, जिससे व्यक्तिगत सम्पत्ति की अवधारणा बनी। चूंकि अब सम्पत्ति उन्ही क्षेत्रों में बनाई जा रही थी जो पुरुषों के नियन्त्रण में थी। इसीलिए स्त्रियाँ आर्थिक रूप से पुरुषों पर निर्भर

हो गई। सम्पत्ति के उत्तराधिकार की सुनिश्चिता के लिए एक विवाही संबंध स्थापित हुए जिससे समाज पितृसत्तात्मक परिवारों में बदल गये। अब मातृत्व के अधिकार ख़त्म कर दिए गये तथा समाज का स्वरूप मातृसत्तात्मक से पितृसत्तात्मक होने लगा। जहाँ स्त्रियों का श्रम व्यक्तिगत सेवा बन गया तथा उसे घरेलू कार्यों में लगाकर उत्पादन के क्षेत्र से बाहर कर दिया गया। सामन्तवादी युग तक स्त्रियों को सम्पत्ति के अधिकार सहित कोई भी सामाजिक, राजनितिक, धार्मिक अधिकार प्राप्त नही था तथा उनकी इस सामाजिक पारिवारिक स्थिति को धर्म, कानून और सामाजिक विधानों की स्वीकृति प्राप्त थी। सामन्तवाद के गर्भ में जब पूँजीवाद का भ्रूण विकसित हो रहा था, उसी समय से सामाजिक उत्पादन में स्त्रियों की भागीदारी प्रारंभ हुई। यही वह भौतिक आधार था, जिसने पहली बार स्त्रियों के भीतर सामाजिक अधिकारों की चेतना को जन्म दिया। पूँजीवादी व्यवस्था के अस्तित्व में आने के प्रक्रिया के प्रारम्भिक चरण में स्त्रियों ने सबसे पहले समानता की माँग की। पूँजीवादी क्रान्ति के काल में स्त्री आन्दोलनों की सबसे महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ मैरी विल्सटोनक्राफ्ट की पुस्तक 'स्त्री के अधिकारों का औचित्य प्रतिपादन' थी। स्त्रीवादी आन्दोलनों तथा सत्ता के विरोध की बुनियादी रूपरेखा इसी पुस्तक में दिखाई पड़ती हैं। स्त्रीवादी आन्दोलन के विकास की प्रक्रिया उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में प्रारम्भ हुई। स्त्री प्रश्नों के वर्गीय आधारों को उद्घाटित करते हुए मार्क्स और एंगेल्स ने पहली बार स्पष्ट किया कि निजी सम्पत्ति और वर्गीय समाज के संगठन की प्रक्रिया स्त्री की दासता की शुरुआत थी। पूँजीवादी समाज में कामगार स्त्रियाँ शोषण–उत्पीड़न का शिकार तो रही है साथ ही सम्पत्तिशाली वर्गों की स्त्रियाँ भी सामाजिक श्रम से कटी हुई नारकीय दासता एवं पुरुष वर्चस्व के बोझ से दबी हुई थी। स्त्रियों की मुक्ति के लिए मार्क्स और एंगेल्स ने स्पष्ट किया कि पहले स्त्री मजदूरों की वर्ग चेतना को उन्नत किया जाय तथा उनकी सामाजिक राजनीतिक जीवन में उनकी भागीदारी बढ़ायी जाय। बाद के मार्क्सवादियों में प्रमुख बीसवीं शताब्दी के चिंतक अन्तोनियों ग्राम्शी ने वर्चस्व अर्थात् (प्रधान्य सिद्धांत) की संकल्पना की। उन्होंने पुरुष वर्चस्ववाद के लिए सामाजिक संस्थाओं को जिम्मेदार माना। उनके अनुसार समाज में मौजूद वैचारिक संरचना स्त्रियों तथा निम्नवर्ग के शोषण में मददगार होती है। ग्राम्शी की 'सबाल्टर्न' (निम्नवर्गीय पद्धति) समाज में वैचारिक प्रतिरोध दर्ज

कराती है। मार्क्सवाद से प्रेरित स्त्री–मुक्ति आन्दोलन की धारा को बीसवीं शताब्दी में क्लारा जेटकिन, क्रुप्सकाया आदि कम्युनिस्ट स्त्री चितंको ने अपनी सामाजिक सक्रियता तथा लेखन के द्वारा आगे बढ़ाया तथा उसमें अहम भूमिका निभाई। स्त्री अधिकारों की सबसे सशक्त पहल 'सिमोन द बोउवार' ने की उन्होंने अपनी कृति 'द सेकेण्ड सेक्स' 1953 ई. में की। इन्होंने स्त्रियों की दासता, उत्पीड़न को रेखांकित करते हुए यह प्रस्थापना दी कि स्त्री पैदा नही होती, स्त्री बनाई जाती है। साठ के दशक का स्त्रीवादी आंदोलन इस चेतना से काफी प्रभावित था। इसी कड़ी में दूसरी प्रसिद्ध कृति बेट्टी फ्रायडन की 'द फेमिनिन मिस्टिक' है जिसमें स्त्रियों की घरेलू दासता और पुरुष वर्चस्ववाद की उग्र आलोचना की गई थी।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में मार्क्सवादी सिद्धांतों को पूँजीपति वर्ग और मजदूर वर्ग के दृष्टिकोण से नही बल्कि जाति व्यवस्था की जटिलताओं तथा उनके बीच भेदभाव, अछूतपन तथा धार्मिक सत्ता को ध्यान में रखते हुए देखना होगा। प्राचीन वैदिक काल से ही भारतीय समाज को वैदिक संस्कृति का निर्माण करने वालों ने चार वर्णों में विभाजित कर अपना वर्चस्व स्थापित करने की नीतियों का निर्माण किया जिससे हाशियें पर रह रहा वंचित उत्पादक वर्ग उनका दास बन गया। इसलिए भारतीय समाज में 'वर्ग–संघर्ष' की जगह 'वर्ण संघर्ष' दिखाई पड़ता है। भारतीय समाज जिन चार वर्ण (जातियाँ) में विभाजित है उनमें प्रथम स्थान पर खड़ा है ब्राह्मण, क्रमशः द्वितीय तथा तृतीय स्थान पर क्षत्रिय तथा वैश्य और समाज के अंतिम पायदान पर खड़ा है शूद्र और इसमें भी एक पंचम वर्ण है जो इस ब्राह्मणवादी वर्ण व्यवस्था से बाहर है वह है अन्त्यज, अछूत (दलित)। इनमें से प्रथम तीन वर्ण (जातियाँ) ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य मिलकर एक उच्च वर्गीय सत्तामूलक समाज का निर्माण करते है। भारतीय समाज इसी ब्राह्मणवादी वैचारिकी से संचालित रहा। इसने एक ऐसी संस्कृति का निर्माण किया जो आज तक समस्त रीति–रिवाजों, आचार–व्यवहार, खान–पान, वेश–भूषा, तीज–त्यौहार, भाषा के माध्यम से इसकी सत्ता को प्रतिष्ठित करती रही है। इसलिए कहा जा सकता है कि भारतीय इतिहास, संस्कृति, शिक्षा, साहित्य, अर्थ, सभी सामाजिक, राजनीतिक इकाइयाँ इस ब्राह्मणवादी या हिन्दूवादी वैचारिकी द्वारा संचालित होती आ रही है।

ब्राह्मणवादी सत्ता–संस्कृति में शूद्रों के साथ–साथ महिलाओं की स्थिति भी बद से बदतर रही। ब्राह्मणवादी मूल्य–व्यवस्था का यह विचित्र संयोग है कि स्त्री और शूद्र दोनों ही श्रम से जुड़े रहे और दोनों ही भारतीय समाज के विकास की मुख्य धुरी है परन्तु दोनों को ही मुख्यधारा से विलग कर हाशियें पर धकेल दिया गया। भारतीय समाज में जिस प्रकार दलित समुदाय ब्राह्मणवादी वैचारिकी के हाथों सदियों से अन्याय और शोषण सहता रहा उसी प्रकार स्त्री समुदाय भी ब्राह्मणवादी पितृसत्तात्मक वैचारिकी के हाथों दमित और शोषित रही। आज दोनों ही भारतीय समाज और इतिहास में अपनी अस्मिता, अपनी पहचान पाने के लिए संघर्षरत् है। भारतीय समाज में ब्राह्मणवादी सत्ता–संस्थानों ने सचेतन रूप से न केवल दलित समुदाय बल्कि स्त्री समुदाय को समाज–इतिहास से बाहर कर दिया। दलित समुदाय को एक ओर जहाँ समाज से बहिष्कृत कर दिया गया वही स्त्री को घर की चहारदीवारी के भीतर कैद कर दिया गया। पितृसत्तात्मक व्यवस्था प्रारम्भ से ही स्त्री के विकास में बाधक रही है। जन्म से लेकर जीवन पर्यन्त स्त्रियां इस व्यवस्था के भीतर शोषण की शिकार रही। यद्यपि इसमें दलित स्त्रियों की स्थिति सवर्ण महिलाओं से अलग थी। दलित स्त्रियाँ पितृसत्ता के साथ ही साथ ब्राह्मणवादी जातिगत मानसिकता के शोषण की शिकार रही। उनमें भी दलितों में भी दलित माने जाने स्त्री (वाल्मीकी समाज) मैला ढोनें वाली अछूतों में भी अछूत समझी गयी तथा तिहरे शोषण का शिकार रही।

भारतीय समाज में समाज–सुधार सूत्रपात गौतम बुद्ध ने किया। बुद्ध ने अपने समय की इन प्रतिष्ठित संस्कृति तथा उनकी मान्यताओं का विरोध किया। जहां शिक्षा का अधिकार, धार्मिक कर्मकाण्ड, मान्यताएँ सिर्फ उच्च वर्णों के लिए ही थे। बुद्ध ने शिक्षा तथा धार्मिक स्वीकृति के मार्ग निम्न वर्ग तथा स्त्रियों के लिए भी उपलब्ध कराया। यद्यपि प्रारम्भ में स्त्रियों को बौद्ध विहारों में आना प्रतिबन्धित रहा, परन्तु बाद में वे भी विहारों में आने लगी। जिसके परिणामस्वरूप स्त्रियों में शिक्षा तथा ज्ञान का प्रकाश फैला। बुद्ध की शिक्षाओं से प्रभावित बौद्ध भिक्षुणियों के विचारोद्गार 'थेरी गाथाओं' में संग्रहित है। इन गाथाओं में भिक्षुणियों के आध्यात्मिक जीवन के साथ–साथ उनके पारिवारिक और समाजिक जीवन वर्णित है। बौद्ध धर्म ने समाज में व्याप्त ब्राह्मणवादी वैचारिकी की जकड़न को ढीला किया। बुद्ध और उसके बाद के अनुयायियों ने वर्चस्वाद,

ब्राह्मणवादी संस्कृति का विरोध किया। यह एक प्रकार से शोषितों, दलितों, स्त्रियों, शूद्रों की चेतना का प्रथम अध्याय था जो मध्यकाल में बढ़ते हुए कबीर तक आया। जहां तक स्त्रियों की बात की जाए तो मध्यकाल में मीरा ने लोक–लज्जा का परित्याग करते हुए सामाजिक तथा राजनीतिक सत्ता के विरुद्ध गई।

महात्मा फुले नए भारतीय समाज के निर्माता है। फुले ने शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया था तथा वे दलितों और स्त्रियों के लिए शिक्षा को अनिवार्य मानने लगे थे। फुले ने अपनी पत्नी सावित्री बाई फुले को स्त्री–शिक्षा के लिए प्रेरित किया। सावित्री बाई फुले अपने पति के साथ मिलकर स्त्री अधिकारों एवं शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किये। डॉ. अम्बेडकर दलितों और स्त्रियों की दुर्दशा का मूल कारण अशिक्षा को माना उन्होंने दलितों, स्त्रियों की मुक्ति के लिए शिक्षित होने, संगठित होने तथा आजीवन संघर्ष करने का आवाह्न किया।

ब्राह्मणवादी वैचारिकी द्वारा संचालित इस पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्रियों के प्रति व्याप्त इन अंतर्विरोधों और असमानता के प्रति स्त्रियों के विद्रोही स्वर आरम्भिक समय में मिलने लगते है। ताराबाई शिंदे की 'स्त्री पुरुष तुलना', पड़िता रमाबाई की 'द हाई कास्ट हिंदू वुमेन', अज्ञात हिंदू औरत की 'सीमंतनी उपदेश', तथा दुखिनी बाला की 'सरला : एक विधवा की आत्म जीवनी', में इन चारों विधवाओं ने अपने आत्मकथात्मक गद्य में पुरुष वर्चस्व द्वारा खींची गई दीवारों को तोड़कर स्त्रियों के बाहर आने का आव्हन कर रही थी। आधुनिक समय में जब साहित्य में स्त्रियों को अभिव्यक्ति करने का अवसर प्राप्त हुआ तो स्त्री जीवन का यथार्थ साहित्य की अन्य विधाओं यथा कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, निबन्ध आदि की अपेक्षा आत्मकथाओं के माध्यम से अधिक प्रामाणिक ढ़ंग से सामने आया। महिला लेखिकाओं ने इन आत्मकथाओं के माध्यम से अपने जीवन अनुभवों को पाठकों विद्यार्थियों के समक्ष रखने तथा समाज की छुपी हुयी सच्चाई को सामने लाने का प्रयत्न किया। उल्लेखनीय है कि महिला आत्मकथाएँ केवल महिला रचनाकारों के जीवन के तथ्यों तथा घटनाओं का ब्यौरा भर नही है, वरन् भारतीय समाज में व्याप्त पितृसत्तात्मक व्यवस्था की व्याख्या भी है। एक स्त्री जिस समाज में पैदा होती है, उस समाज में विद्यमान विचारों, संस्कारों, पूर्वाग्रहों, मान्यताएँ, रीति–रिवाज, विश्वास आदि उसके व्यक्तित्व का निर्माण करते है।

पितृसत्ता के वर्चस्व ने स्त्रियों के निजी एवं सामाजिक जीवन को प्रभावित कर कुंठित किया है, इसकों समझने में स्त्री आत्मकथाएँ महत्वपूर्ण है। लेखिकाओं द्वारा लिखी गई इनकी आत्मकथाओं में उनके द्वारा किये गये संघर्ष तथा नारी चेतना का वह रूप प्रत्यक्ष होता है जिसके माध्यम से उन्होंने परम्परागत लीक से हटकर अपने समय की संकीर्ण मानसिकताओं, पक्षपाती मान्यताओं को चुनौती दी। इन लेखिकाओं द्वारा स्त्री को चहारदीवारी के भीतर सीमित दयारे को तोड़ने का प्रयत्न किया है। ये आत्मकथाएँ महिला रचनाकारों के जीवन के बहुमुखी संघर्ष की प्रामाणिक अभिव्यक्तियाँ हैं। हिन्दी की महिला आत्मकथाकारों ने अपनी आत्मकथाओं में पारिवारिक, सामाजिक और राजनीतिक संदर्भों में स्त्रियों की समस्याओं की बात की है। महिला रचनाकरों ने इन आत्मकथाओं में जीवन अनुभवों को अभिव्यक्त किया है। ये आत्मकथाऐं परिवार तथा समाज में स्त्री के दोयम दर्जे की स्थिति का विवेचन एवं विश्लेषण करती हैं। इनमें सामाजिक एवं वैयक्तिक संबंधों की अभिव्यक्ति हुयी है।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी जीवन पर आधारित दो आत्मकथात्मक उपन्यास लिखे है – 'कस्तूरी कुण्डल बसै' तथा 'गुड़िया भीतर गुड़िया'। 'कस्तूरी कुण्डल बसै' आत्मकथा स्त्री कथा के साथ–साथ एक स्त्री द्वारा स्त्री दृष्टि से लिखी गई है। जिसमें माँ को केन्द्र में रखा गया है। 'गुड़िया भतीर गुड़िया' में मैत्रेयी ने समकालीन समाज को बेनकाब किया है। रमणिका गुप्ता ने अपनी आत्मकथा दो खण्डों में लिखी है– 'हादसे' तथा 'आप हुदरीः एक जिद्दी लड़की की आत्मकथा'। 'हादसे' रमणिका जी के सामाजिक, राजनीतिक पहचान बनाने की कहानी है। इनकी आत्मकथा का दूसरा खण्ड 'आपहुदरी' पुरुषवादी पितृसत्तावादी तथा सामन्तवादी मानसिकता के विरूद्ध है। प्रभा खेतान ने अपने जीवन संघर्ष की कहानी अपनी आत्मकथा 'अन्या से अनन्या' में कही है। इन्होंने सामाजिक और पारिवारिक बंधनो को तोड़कर एक स्वतंत्र स्त्री के जीवन के लिए प्रस्तुत किया है। मन्नू भण्डारी की आत्मकथा 'एक कहानी यह भी' उनके लेखकीय व्यक्तित्व एवं लेखन यात्रा पर केन्द्रित है। परन्तु इसमें उनके बचपन माता–पिता, शिक्षा विवाह–दामपत्य, सामाजिक जीवन के प्रसंग इसे देश और समाज से जोड़ते है। चन्द्र किरण सौनरेक्सा की आत्मकथा 'पिंजरे की मैना' में निम्न मध्यवर्गीय परिवार के उतार–चढ़ाव अन्तर्द्वन्दों, सामाजिक

कुरीतियों, विषमताओं तथा बंधनों का चित्रण किया है। सुषम बेदी की आत्मकथा 'आरोह–अवरोह' एक प्रवासी भारतीय महिला की आत्मकथा है। कौशल्या बैसंत्री की आत्मकथा 'दोहरा अभिशाप' में दलित महिलाओं के उत्पीड़न और संघर्ष को दिखाया है। 'दोहरा अभिशाप' में कौशल्या जी ने अपनी जीवनाभुव को प्रस्तुत करत हुए सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक राजनीतिक परिवेश के अनेक बिन्दुओं को विवेचित किया है। सुशीला टाकभौरे की आत्मकथा 'शिंकजे का दर्द' दलित स्त्री के शोषण के विरुद्ध संघर्ष की गाथा है। इसमें दलितों में भी दलित समझे जाने वाली स्त्री की मनुवादी समाज, दलित समाज, ब्राह्मणवादी मनोवृत्ति वाले पुरुषीय समाज में शिकंजे के विरुद्ध आज की दलित स्त्री के आक्रोश एवं विद्रोह की कथा है। कावेरी की आत्मकथा 'टुकड़ा–टुकड़ा जीवन' में दलित परिवारों में पितृसत्ता के कठोर रूप का वर्णन है। रजनी तिलक की आत्मकथा 'अपनी जमीं अपना आसमां' है। इसमें रजनी जी द्वारा दलित स्त्री के जीवन तथा दलित और स्त्री मुक्ति आन्दोलन की कथा कही गई है। आशा आपराद की आत्मकथा 'दर्द जो सहा मैने' एक भारतीय मुस्लिम परिवार में जन्मी ऐसी स्त्री की गाथा है जिसने बचपन से स्वयं को संघर्षों में पाया है। आशा जी अपनी आत्मकथा को उन स्त्रियों का प्रतिनिधिक स्वरूप मानती है जो आज भी समाज में गुलामों की भांति जीवन जी रही है। लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी की आत्मकथा 'मैं हिजड़ा... मैं लक्ष्मी' पुरुष प्रधान समाज में अपमानित कुंठित होकर हिजड़ा समुदाय में शामिल होने वाली हिजड़ा की कथा है। मानोबी बंधोपाध्याय की आत्मकथा 'पुरुष तन में फँसा मेरा नारी मन' एक पुरुष शरीर के भीतर स्त्री भावनाएँ तथा अपनी असल पहचान स्थापित करने की एक हिजड़ा की साहसपूर्ण संघर्ष की कहानी है।

महिला रचनाकारों तथा हिजड़ा समुदाय की ये आत्मकथाएँ पितृसत्तात्मक और जातिवादी रूढ़िवादी, परम्परावादी मानसिकताओं के अन्तर्गत समाज में स्त्रियों की स्थिति, संघर्ष तथा शोषण के विविध रूपों हिंसाचार या बलात्कार, घरेलू हिंसा, बौद्धिक शोषण, धार्मिक शोषण, छुआछूत आदि सामजिक विसंगतियों को उजागर करती है। ये आत्माकथाएँ भारतीय समाज को उसका वास्तवकि स्वरूप दिखाने का प्रयास करती है। लेखिकाओं द्वारा लिखी गई ये आत्मकथाएँ आधुनिक काल का स्त्री विमर्श हमारे सामने प्रस्तुत करती है।

प्रस्तुत विषय से सम्बन्धित अन्य शोध कार्य –

(क) 'समकालीन नारी जीवन और हिन्दी आत्मकथा'– कु0 क्रांति कल्याणराव गायकवाड, पीएच.डी., डा0 बाबासाहेब अंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरगांबाद।

(ख) 'हिन्दी की महिला आत्मकथाकारों की आत्मकथाओं का अनुशीलन'– नेहा, पीएच.डी., माधव महाविद्यालय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर

पुस्तक समीक्षा –

(क) 'हिन्दी लेखिकाओं की आत्मकथाएं'– डॉ0 सरजू प्रसाद मिश्र, अमन प्रकाशन कानपुर, संस्करण– 2011

प्रस्तावित शोध कार्य की आवश्यकता एवं महत्व –

साहित्य के अन्तर्गत महिला साहित्यकारों की ये आत्मकथाएँ उनके अपने जीवन संघर्ष के प्रामाणिक अनुभवों की अभिव्यक्तियाँ हैं। यद्यपि आधुनिक काल में स्त्री चेतना का विकस हुआ है, वह आर्थिक रूप से स्वतंत्र भी हुई है तथापि ब्राह्मणवादी वैचारिकी द्वारा संचालित इस परम्परावादी मनुवादी मानसिकता वाले समाज में वह विविध रूप से शोषण की शिकार है। आत्मकथाओं में प्रस्तुत पितृसत्ता, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक सत्ताओं के स्वरूप को शोधकार्य के माध्यम से विश्लेषित करना एवं उसका गहन अध्ययन विभिन्न विचारों के माध्यम से करना शोध कार्य की आवश्यकता, महत्ता एवं सार्थकता को सिद्ध करता है। महिला आत्मकथाकारों ने अपने अर्न्तमन के भावों तथा अपने इंसान होने के वजूद को अपनी आत्मकथाओं में अभिव्यक्त किया है जिसका विश्लेषण एवं अध्ययन करना शोधकार्य की एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है। यह शोध कार्य पूर्णतः मौलिक एवं नवीन है।

प्रस्तावित शोध कार्य का उद्देश्य –

प्रस्तावित शोध विषय 'सत्ता का वर्चस्ववादी स्वरूप और हिन्दी की महिला आत्मकथाएँ' के अन्तर्गत आत्मकथाओं में वर्णित समाज की वास्तविकताओं जीवन अनुभवों, विचारों तथा अभिव्यक्ति की कलात्मक क्षमता का अध्ययन करने के पश्चात् शोध कार्य किया जायेगा।

सत्ता और वर्चस्व के वैचारिक स्वरूप का अध्ययन करते हुए सत्ता के वर्चस्ववाद की अवधारणा तथा स्वरूपों सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, इतिहास की सत्ता के साथ–साथ सत्ता के प्रतिरोधी स्वरूप पाश्चात्य तथा भारतीय सन्दर्भ का अध्ययन किया जायेगा। पितृसत्ता का इतिहास और वर्तमान का गहराई से विश्लेषण किया जायेगा। हिन्दी की महिला आत्मकथाओं का परिचयात्मक विवेचन करते हुए आत्मकथाओं में निहित सत्ता का वर्चस्ववादी स्वरूप, वर्चस्ववाद यथा पितृसत्ता, आर्थिक सत्ता, धार्मिक सत्ता, राजनीतिक सत्ता का विवेचेन करते हुए वर्चस्ववाद के स्त्रीवादी दृष्टिकोण पर गहन विचार मंथन किया जायेगा। साथ ही हिन्दी महिला आत्मकथाओं के सौन्दर्यमूल्यों, आत्मकथाओं में प्रयुक्त भाषा के प्रयोग बिम्ब–प्रतीक, लोक–गीत, लोक–मुहावरों का विश्लेषण करते हुए गहनता से अध्ययन करना प्रमुख उद्देश्य रहेगा।

प्रस्तावित शोध कार्य में प्रयुक्त प्रविधि –

प्रस्तावित शोध कार्य 'सत्ता का वर्चस्ववादी स्वरूप और हिन्दी की महिला आत्मकथाएँ' हेतु सत्ता का वर्चस्ववादी स्वरूप तथा विवेच्य आत्मकथाओं का गहन अध्ययन, अनुशीलन तथा संदर्भ ग्रन्थों के आधार पर समीक्षात्मक, गुणात्मक, वर्णात्मक, विवरणात्मक, विश्लेषणात्मक शोध प्रविधियों का प्रयोग किया जायेगा। न केवल पुस्तके, पत्र पत्रिकायें, संदर्भ ग्रन्थ अपितु विषय से सम्बन्धित लेखकों से विचार विमर्श के साथ–साथ साक्षात्कार–प्रश्नावली आदि शोध प्रविधियों का समुचित प्रयोग करते हुए शोध कार्य को सार्थक बनाने का प्रयास रहेगा।

'सत्ता का वर्चस्ववादी स्वरूप और हिन्दी की महिला आत्मकथाएँ'

प्रथम अध्याय – सत्ता और वर्चस्व का वैचारिक स्वरूप

(1) सत्ता के वर्चस्ववाद की अवधारणा : पृष्ठभूमि

(2) सत्ता के वर्चस्ववाद का स्वरूप

2.1 सामाजिक स्वरूप

2.2 धार्मिक स्वरूप

2.3 राजनीतिक स्वरूप

(3) सत्ता के वर्चस्ववाद का स्त्रीवादी दृष्टिकोण

द्वितीय अध्याय – सत्ता के वर्चस्ववाद का प्रतिरोधी स्वर

(1) पाश्चात्य सन्दर्भ – मैरी वोलस्टोनक्राफ्ट, कार्ल मार्क्स, फ्रेडरिक एंगेल्स, अंतोनियो ग्राम्शी, क्लारा जेटकिन, क्रुप्सकाया, सिमोन द बोउवार, बेट्टी फ्रायडन एवं अन्य।

(2) भारतीय सन्दर्भ – बुद्ध, कबीर, मीरा, ज्योतिबा फुले, सावित्री बाई फुले, फ़ातिमा शेख, ताराबाई शिंदे, पंडिता रमाबाई, अम्बेडकर, शर्मिला रेगे एवं अन्य।

तृतीय अध्याय – हिन्दी आत्मकथा लेखन का उद्भव, विकास एवं स्वरूपगत संरचना

(1) हिन्दी आत्मकथा का उद्भव एवं पृष्ठभूमि

(2) आधुनिक काल में हिन्दी आत्मकथा लेखन

(3) हिन्दी साहित्य में महिला आत्मकथा लेखन एवं चुनौतियाँ

चतुर्थ अध्याय – हिन्दी की प्रमुख महिला आत्मकथाएँ : परिचयात्मक अध्ययन

(1) गैरदलित महिला आत्मकथाएँ

- कस्तूरी कुण्डल बसे, गुड़िया भीतर गुड़िया– मैत्रयी पुष्पा
- हादसे, आपहुदरी – रमणिका गुप्ता
- अन्या से अनन्या – प्रभा खेतान
- एक कहानी यह भी – मन्नू भंडारी

- पिंजरे की मैना – चन्द्रकरिण सौनरेक्सा
- आरोह–अवरोह – सुषम बेदी

(2) दलित महिला आत्मकथाएँ

- दोहरा अभिशाप–कौशल्या बैसंत्री
- शिंकजे का दर्द–सुशीला टॉकभौरे
- टुकड़ा टुकड़ा जीवन–कावेरी
- अपनी जमीं अपना आसमां–रजनी तिलक

(3) मुस्लिम महिला आत्मकथाएँ

- दर्द जो सहा मैंने–आशा आपराद

(4) हिजड़ा समुदाय की आत्मकथाएँ

- लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी–मै हिजड़ा मै लक्ष्मी
- मानोबी बंधोपाध्याय–पुरूष तन में फंसा मेरा नारी मन

पंचम अध्याय – हिन्दी की महिला आत्मकथाओं में सत्ता के वर्चस्ववाद की विरोधी चेतना

(1) पितृसत्ता

1.1 पितृसत्तात्मक समाज, परिवार, विवाह संस्था,

1.2 पितृसत्तात्मक मानसिकता एवं शोषण के विभिन्न रूप– यौन हिंसा, घरेलू हिंसा, बौद्विक हिंसा

(2) आर्थिक सत्ता –

2.1 आर्थिक संघर्ष, निर्धनता और स्त्री

2.2 आर्थिक आत्मनिर्भरता और स्त्री

(3) राजनीतिक सत्ता

3.1 राजनीतिक विसंगतियों और स्त्री

3.2 स्त्री का राजनीतिक में प्रवेश

(4) धार्मिक सत्ता

4.1 स्त्री का धार्मिक शोषण

4.2 छूआछूत

4.3 रूढ़िवादिता एवं परम्पराऐं

(5) सांस्कृतिक सत्ता

5.1 लोक जीवन परंपराये एवं विचार

5.2 पर्व एवं त्यौहार

5.3 रहन–सहन, खान–पान एवं रंग–रूप

षष्ठ अध्याय– हिन्दी की महिला आत्मकथाओं का सौन्दर्यशास्त्र एवं भाषा का प्रतिरोधी स्वर

(1) सौन्दर्यशास्त्र के पितृसत्तात्मक मूल्य

(2) स्त्रीवादी सौन्दर्यशास्त्र के मूल्यविधान

2.1 भाषा की मातृतलीय बुनावट

2.2 भाषा में प्रतिरोधी स्वर

2.3 बिम्ब–प्रतीक में प्रतिरोधी अभिव्यक्ति

2.4 लोकगीत का स्त्रीवादी सौन्दर्य

2.5 लोकमुहावरों का स्त्रीवादी स्वरूप

उपसंहार

परिशिष्ट –

1 साक्षात्कार

2 सन्दर्भ ग्रन्थ

- आधार ग्रन्थ
- सहायक ग्रन्थ
- कोश

- विश्वकोश
- पत्र–पत्रिकाएं
- प्रश्नावली

नोट– शोध निर्देशक के सुझाव से अध्याय एवं शोधकार्य में 20 प्रतिशत परिवर्तन संभव है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

आधार–ग्रन्थ

क्रम संख्या	आत्मकथा	आत्मकथाकार	प्रकाशन	संस्करण
1	अन्या से अनन्या	प्रभा खेतान	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली	2016
2	अपनी जमीं अपना आसमां	रजनी तिलक	ईशा ज्ञानदीप, शाली–मार बाग, नई दिल्ली	2017
3	आप हुदरी : एक जिद्दी लड़की की आत्मकथा	रमणिका गुप्ता	सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली	2018
4	आरोह–अवरोह	सुषम बेदी	सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली	2017
5	एक कहानी यह भी	मन्नू भण्डारी	राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली	2017
6	कस्तूरी कुण्डल बसै	मैत्रेयी पुष्पा	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली	2017
7	गुड़िया भीतर गुड़िया	मैत्रेयी पुष्पा	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली	2016
8	टुकड़ा टुकड़ा जीवन	कावेरी	ईशा ज्ञानदीप, नई दिल्ली	2017
9	दर्द जो सहा मैने	आशा आपराद	राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली	2013
10	दोहरा अभिशाप	कौशल्या बैसंत्री	परमेश्वरी प्रकाशन, प्रीत बिहार, दिल्ली	2016
11	पिंजरे की मैना	चन्द्र किरण सौनरैक्सा	पूर्वोदय प्रकाशन नई दिल्ली	2008
12	पुरूष तन में फँसा मेरा नारी मन	मानोबी बंधोपाध्याय	राज पाल एण्ड सन्स़, नई दिल्ली	2018
13	मै हिजड़ा मैं लक्ष्मी	लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	2018
14	शिकंजे का दर्द	सुशीला टॉकभौरे	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली	2014
15	हादसे	रमणिका गुप्ता	राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली	2010

सहायक–ग्रन्थ

1. आत्मकथा साहित्य : स्मृतियों का प्रत्याख्यान, उमा मीणा, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2015
2. आत्मकथा की संस्कृति, पंकज चतुर्वेदी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2011
3. कम्युनिस्ट पाटी का घोषणा पत्र, कार्ल मार्क्स फ्रेडरिक एंगेल्स, क्रिएट स्पेस इंडिपेंडेंट पब्लिशिंग प्लेटफार्म संस्करण–2015
4. जाति का विनाश, डॉ0 बी0 आर आंबेडकर, फारवर्ड प्रेस, नई दिल्ली संस्करण–2018
5. जाति वर्ग और संस्कृति, नरेन्द्र कुमार संवाद प्रकाशन, मेरठ, संस्करण–2018
6. देहरि भई विदेस, राजेन्द्र यादव, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2013
7. भारत का इतिहास, रोमिला थापर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2016
8. राजनितिक चिंतन के रूपरेखा, ओ0पी0 गाबा, मयूर पेपरबैक, नई दिल्ली, संस्करण–2016
9. समकालीन दलित महिला लेखन (आत्मकथा), रजनी तिलक, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली संस्करण–2018
10. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी दिनकर, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, संस्करण–2019
11. स्त्री–प्रश्न, नमिता सिंह, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2017
12. स्त्री मुक्ति संघर्ष और इतिहास, रमणिका गुप्ता, सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण–2012
13. स्त्री विमर्श का लोकपक्ष, अनामिका वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2012
14. सत्ता संस्कृति और दलित सौन्दर्यशास्त्र, सूरज बड़त्या, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली, संस्करण–2012
15. हिन्दी महिला कथाकारों की आत्मकथाऐं : एक विवेचन, दिनेश द्विवेदी, अद्वैत प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–2015

पत्र–पत्रिकाएँ –

1 हंस पत्रिका, संपा. राजेन्द्र यादव, संजय सहाय

2 दलित अस्मिता (त्रैमासिक), संपा. विमल थोराट

3 मंतव्य (दलित विशेषांक), अतिथि संपा., सूरज बड़त्या

4 तद्भव (त्रैमासिक), संपा. अखिलेश